द्वितीय विश्वयुद्ध के दौर में भारत (1939–1945)

दीपक कुमार
शोद्यार्थी, इतिहास विभाग
बी.आर.ए.बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

सारांश :–

1 सितम्बर, 1939 को जैसे ही जर्मनी ने पोलैण्ड पर आक्रमण कर दिया, इसके साथ ही द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू हो गया। ब्रिटेन और फ्रांस ने दो दिन बाद 3 सितम्बर 1939 को जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अनिश्चय की अवस्था समाप्त हो गई। वायसराय ने भारत को युद्धरत राज्य घोषित कर दिया। इस कार्य की वैद्यानिकता निर्विवाद थी, लेकिन ऐसा करने से पूर्व भारत के राजनीतिक नेताओं से सलाह–मशविरा करने की मंशा तक न जाहिर की गई। लार्ड लिनलिथगों और सामान्यतः ब्रिटिश अधिकारियों की दृष्टि में यह स्वयंसिद्ध था कि आवश्यकता पड़ने पर ''साम्राज्य का मुकुट मणि'' अर्थात भारत स्वयंमेव ब्रिटेन की सहायता करेगा। इस प्रकार, ब्रिटिश सरकार ने भारतीय जनता की राय लिए बिना भारत को युद्ध की ज्वाला में झोंक दिया। नेहरू तथा अधिकांश भारतीय राष्ट्रवादियों ने इस प्रश्न को बिलकुल दूसरे दृष्टिकोण से देखा। उन्होंने कई बार इसकी घोंषणा की थी कि गुलाम भारत तब तक ''साम्राज्यवादी'' युद्ध में भाग नहीं लेगा, जब तक इसके आजाद होने के अधिकार को स्वीकार न कर लिया जाए।

युद्ध की शुरूआत के बाद वायसराय के निमंत्रण पर गाँधीजी ने उनसे 4 सितम्बर, 1939 को शिमला में भेंट की। उन्होंने इस अवसर पर इंग्लैण्ड के प्रति सहानुभूति प्रकट की लेकिन, कांग्रेस कार्यसमिति के आदेश के अभाव में उन्होंने किसी प्रकार का आश्वासन देने में असमर्थता प्रकट की।

कांग्रेस साम्राज्यवादी व्यवस्था की रक्षा हेतु युद्ध में किसी प्रकार का सहयोग देने को तैयार नहीं थी। अतः उसने ब्रिटिश सरकार से कहा कि वह लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए अपने युद्ध–उद्देश्यों को स्पष्ट करें।

सन् 1939 में कांग्रेस आलाकमान ने इस विश्वयुद्ध को फासिज्म–विरोधी जनतांत्रिक युद्ध की संज्ञा दी थी और इसी आधार पर आजादी की लड़ाई की रणनीति तैयार करने की कोशिश की थी।

युद्ध में भारत का शामिल होना :–

1939 में जब ब्रिटिश ने जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा की तो ब्रिटिश सरकार ने उसी नीति का पालन करना चाहा जो 1914 के युद्ध के समय अपनाई गई थी। भारत को ब्रिटिश नीति के हाथों की कठपुतली बना दिया गया जो अपने देश की जनता से सलाह–मशविरा किए बिना अपने आप ही ब्रिटेन के पीछे–पीछे युद्ध में घिसटता चला गया। अंग्रेजी सरकार ने भारतीय विधानमंडल से नाममात्र भी परामर्श किए बिना भारत की ओर से युद्ध की घोषणा कर दी। इस पर कांग्रेस कार्यकारिणी ने विरोध प्रकट किया और 14 सितम्बर 1939 को एक प्रस्ताव में यों कहा–'' भारत की ओर से युद्ध और शांति के प्रश्न का निर्णय, भारतीय लोग ही करेंगे..... हम किसी ऐसे युद्ध से सम्बन्धित नहीं हो सकते अथवा उसमें सहयोग नहीं दे सकते जो साम्राज्यवादी नीतियों पर आधारित हो और जिसका उद्देश्य भारत तथा अन्य स्थानों में साम्राज्यवाद को दृढ़ करना हो। समिति ने मांग की कि अंग्रेजी सरकार यह घोषणा करे कि युद्ध का उद्देश्य जनतंत्र और साम्राज्यवाद के विषय में क्या है और ये भारत पर कैसे लागू किये जाऐंगे। क्या भारत से स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में व्यवहार किया जाएगा?''

युद्ध की घोषणा के कुछ ही घंटों के अंदर वायसराय ने भारतीय जनता के प्रतिनिधियों से किसी तरह का सलाह–मशविरा किए बिना भारत को युद्ध में शामिल घोषित कर दिया। ब्रिटिश संसद ने चटपट 11 मिनट के अन्दर 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया अमेंडिंग एक्ट' पारित कर दिया जिसमें वायसराय को यह अधिकार दिया गया था कि वह प्रांतों की स्वायत्तता के प्रश्न पर भी संविधान के कार्यो को रद्द कर सकता है। 3 सितम्बर 1939 के भारतरक्षा अध्यादेश ने केन्द्र सरकार को यह अधिकार दे दिया कि वह राजाज्ञा (डिक्री) के जरिए शासन कर सकती है, ऐसे कानूनों की घोषणा कर सकती है जो 'ब्रिटिश भारत की रक्षा, जनजीवन की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, युद्ध के कुशल संचालन या समाज के लिए आवश्यक समानों और सेवाओं की सप्लाई बनाए रखने के लिए जरूरी समझी जाए', सभाओं तथा प्रचार के अन्य तरीको पर पाबंदी लगा सकती है, बिना वारंट किसी को गिरफ्तार कर सकती है और कायदे–कानूनों को तोड़ने के अपराध में जुर्माने कर सकती है। इनमें मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा भी शामिल है।

11 सितम्बर को वायसराय ने राज्यसंघ की तैयारियों को स्थगित करने की घोषणा की। भारत में निरंकुश शासन व्यवस्था को अब संविधान का कोई ढ़ोंग रचे बिना जारी रखने की योजना बनाई गई और इसे अत्यन्त व्यापक असाधारण अधिकारों के जरिए मजबूत बनाया गया । 25 वर्ष पहले की ही तरह एक बार फिर भारतीय जनता को ब्रिटिश सरकार के पीछे घिसटते हुए एक ऐसे युद्ध में शरीक हो जाना पड़ा जिससे बचने का इसके पास कोई रास्ता नहीं था और जिसके बारे में उसने लगातार उस नीति का विरोध किया था जिसके कारण युद्ध अनिवार्य बना।

घटनाओं ने जल्दी ही दिखला दिया कि 1914 के मुकाबले भारत की स्थिति कितनी भिन्न थी। 14 सितम्बर को राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्यसमिति ने युद्ध के संदर्भ में अपना ब्यान जारी किया। इस ब्यान में कहा गया था :

यह समिति एक ऐसे युद्ध से न तो स्वयं को संबद्ध कर सकती है और न ही इस युद्ध के साथ सहयोग कर सकती है जो साम्राज्यवादियों की नीति पर चल रहा हो।

प्रस्ताव में यह मांग की गई कि भारत की जनता को किसी बाहरी हस्तक्षेप के बिना एक संविधान सभा के जरिए अपने संविधान को गठन करके आत्मनिर्णय का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। उसे अपनी नीति स्वयं निर्धारित करने का अधिकार मिलना चाहिए। इसलिए राष्ट्रीय कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के लिए प्रत्यक्ष चुनौती प्रस्तुत कर दी।

कार्यसमिति ब्रिटिश सरकार को उस बात के लिए निमंत्रित करती है कि वह स्पष्ट शब्दों में बताए कि इस लड़ाई में जनतंत्र साम्राज्यवाद के विषय में उसके क्या उद्देश्य है, और खासतौर से जिस नई व्यवस्था पर विचार किया जा रहा है, उस संदर्भ में ये उद्देश्य कहां तक भारत पर लागू होने जा रहे है और मौजूदा स्थिति में उन्हें किस प्रकार कारगर बनाया जा रहा है। क्या इन उद्देश्यों में साम्राज्यवाद को समाप्त करना और भारत के एक ऐसे स्वतंत्र देश जैसे व्यवहार करना शामिल है जिसकी नीति देश की जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप निर्देशित हो?

राष्ट्रीय कांग्रेस के इस सीधे सवाल के जवाब में ब्रिटिश सरकार ने जो जवाब दिया वह वस्तुतः नकारात्मक था। ब्रिटिश सरकार ने अपना वहीं पुराना वादा दुहराया जिसमें भविष्य में कभी 'डोनीनियन का दर्जा' देकर किसी तरह की रियायत देने की बात कही गई थी। और इस तरह के वादों की आड़ लेकर वादे अपना तात्कालिक कार्यक्रम एक 'परामर्श समिति' का

गठन करना घोषित किया। परामर्श समिति, भारत को गुलाम बनाए रखने और युद्ध के संचालन को बढ़ावा देने के लिए वायसराय को मदद पहुँचाने के वास्ते भारतीयों के लिए बनाई गई थी।

राष्ट्रीय कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के नेताओं के बीच की यह प्रारंभिक कुटनीतिज्ञ मुठभेड़ उस गहरे संघर्ष का पहला संकेत था जो अन्दर पनप रहा था। कांग्रेस के नेतागण वायसराय के साथ इन कूटनीतिज्ञ वार्ताओं में लगे हुए थे जबकि जनता ने आन्दोलन छेड़ दिया था। 2 अक्टूबर को मुम्बई के 90,000 मजदूरों ने युद्ध और साम्राज्यवाद के दमनकारी उपाय के लिखाफ एक दिन की राजनीतिक हड़ताल की। मुम्बई की सड़के 'साम्राज्यवादी युद्ध का नाश हो' 'भारतीय आजादी अमर रहे', 'लाल झंडा की जीत हो' के नारे से गूंज उठी। युद्ध में संलग्न किसी भी देश में हुये यह पहली युद्ध विरोधी जन हड़ताल थी। भारतीय मजदूर वर्ग के संघर्ष को साम्राज्यवाद के खिलाफ अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग द्वारा चलाए जा रहे संघर्ष का एक हिस्सा समझा गया।

वायसराय के नकारात्मक जवाब के कारण अक्टूबर 1939 में सभी कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने इस्तीफा दे दिया। 1940 के वसंत में रामगढ़ अधिवेशन में कांग्रेस ने अपना यह दृष्टिकोण प्रस्तुत किया– भारत के संदर्भ में ब्रिटिश सरकार की ओर से की गई हाल की घोषणाओं से पता चलता है कि, ग्रेट ब्रिटेन मूलतः साम्राज्यवादी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ही यह लड़ाई लड़ रहा है– इन परिस्थितियों में यह स्पष्ट है कि कांग्रेस परोक्ष या अपरोक्ष किसी भी रूप में युद्ध में शरीक नहीं होगा।

1940 की गर्मियों में यूरोप में नाज़ियों के बढ़ने के साथ और फ्रांस के पतन तथा युद्ध का संकट गहराने के साथ कांग्रेस ने ब्रिटेन के साथ सहयोग का प्रस्ताव किया, बशर्ते भारत को आजादी दे दी जाए और 'केन्द्र में एक अस्थाई राष्ट्रीय सरकार' की स्थापना की जाये, जो भले ही अस्थाई तौर पर हो लेकिन केन्द्रीय विधानमंडल के सभी निर्वाचित सदस्यों का उसे विश्वास प्राप्त हो – 'यदि ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिये जाए तो देश की रक्षा के लिए कारगर संगठन बनाने के प्रयत्नों में कांग्रेस अपनी पूरी ताकत लगा देगी।'

लेकिन ब्रिटिश सरकार ने एक बार फिर इस प्रस्ताव पर नकारात्मक रवैया अपनाया। 8 अगस्त 1940 को वायसराय के ब्यान में (इसे आमतौर पर 'अगस्त प्रस्ताव' कहा जाता है और बाद के वर्षो में क्रिप्स की योजना तथा नीति संबंधि अन्य वक्तव्यों का यही आधार बनाया गया था) घोषणा की गई कि ' भारत की शांति और खुशहाली को देखते हुए ब्रिटिश

सरकार अपनी मौजूदा जिम्मेदारियों को किसी ऐसी सरकार को हस्तांतरित करने के बारे में नहीं सोच सकती थी जिसकी सत्ता को देश के राष्ट्रीय जीवन बड़े और शक्तिशाली तत्व प्रत्यक्ष तौर पर न मानते हों'।

साम्राज्यवाद के खिलाफ निर्णायक संघर्ष के लिए दबाव डालने वाली शक्तियों का विकास कितनी तीव्रता के साथ हो रहा था इसकी अभिव्यक्ति 1939–40 से मजदूरों, किसानों और उग्रराष्ट्रवादी तत्वों के खिलाफ सरकार द्वारा किए गए बर्बर दमन में ही नही बल्कि गांधी द्वारा शुरू किए गए अत्यन्त सीमित और चारों तरफ से घिरे संघर्ष के स्वरूप में भी होती है। यह किसी भी रूप में आजादी के लिए किया गया एक सांकेतिक सत्याग्रह था। दिसम्बर, 1941 में जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा की :– 'दूनिया की प्रगतिशील ताकतें अब उस गुट के साथ पंक्तिबद्ध हैं जिसका प्रतिनिधित्व रूस, ब्रिटेन, अमेरिका और चीन कर रहा है'।

युद्ध के बदलते हुए स्वरूप पर राष्ट्रीय आन्दोलन के सभी हिस्सों ने तत्काल इतनी निश्चित प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की। अब भी कुछ हिस्से ऐसे थे, जो गांधी की 'अहिंसक' शांतिवादी विचारधारा का अनुसरण कर रहे थे। अन्य लोग ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ किसी प्रकार के सहयोग के प्रति सशंकित थे। लेकिन राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख जिम्मेदार नेताओं ने, जिनका प्रतिनिधित्व कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना आजाद तथा जवाहरलाल नेहरू बहुमत के समर्थन से कर रहे थे, बाराबरी के स्तर पर संयुक्त राष्ट्रों के मित्र राष्ट्र की हैसियत से सहयोग का आधार ढूँढ़ने की कोशिश की।

अगस्त 1941 में अटलांटिक चार्टर ने ब्रिटिश और अमेरिकी सरकार की प्रतिभूत नीति का निर्धारण किया जिसका बाद में सभी संयुक्त राष्ट्रों ने पालन किया। 9 सितम्बर 1941 को प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने अपने भाषण में सरकार की ओर से वक्तव्य जारी करते हुए खासतौर से कहा कि भारत, बर्मा तथा ब्रिटिश साम्राज्य के अन्य हिस्सों पर अटलांटिक चार्टर लागू नहीं होता। उन्होंने कहा– अटलांटिक चार्टर के सिलसिले में हुई बैठक में हमारे दिमाग में मूलतः यूरोप के उन देशों को फिर से प्रभुसत्ता, स्वराज्य और राष्ट्रीय जीवन प्रदान करना था जो नाजियों के जुए तले पड़े हुए थे। इस संशोधन से भारत के राष्ट्रीय जनमत को बहुत क्रोध आया और संयुक्त राष्ट्रों की विरोधी प्रवृत्तियों को बल मिला।

''भारत के प्रति ब्रिटेन की नीति में कोई तब्दीली नहीं आई फिर भी समिति युद्ध के कारण घटित घटनाओं पर तथा भारत के प्रति इसके रूख पर विचार करती है। कांग्रेस की सहानुभूति निश्चित रूप से उन्हीं लोगों के साथ होगी जो आक्रमण के शिकार है और गुलाम

बनाए गये है तथा अपनी आजादी के लिए लड़ रहे है, लेकिन एक स्वतंत्र और स्वाधीन भारत ही ऐसी स्थिति में हो तो, हो सकता है कि वह राष्ट्रीय स्तर पर देश की रक्षा का दायित्व संभाल सके।''

इस प्रस्ताव के पारित हो जाने के बाद राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व से गांधी की छुट्टी हो गई क्योंकि वह अहिंसा की नीति छोड़ने पर सहमत नहीं थे।

फरवरी 1942 में जनरलिस्सिमो च्यांग काई शेक की भारत यात्रा से इस अनुकूल शुरूआत को और मदद मिली। अन्होंने साथ ही साथ ब्रिटेन और भारत से सार्वजनिक अपील की। उन्होंने भारतीय जनमत के समक्ष यह जोर देकर कहा कि 'आक्रमणकारी और आक्रमण–विरोधी इन दो खेमों के बीच का कोई मध्य मार्ग नहीं है।' अपने भाषण में उन्होंने ब्रिटेन से अनुरोध किया कि वह भारत की जनता का जितनी जल्दी संभव हो 'वास्तविक राजनीतिक सत्ता' प्रदान करें ताकि इस देश की जनता अपनी समूची शक्ति के साथ युद्ध में हिस्सा ले सके। भारत की राष्ट्रीय मांगों के संदर्भ में अमेरिका, आस्ट्रेलिया और चीन द्वारा डाले गये दबाव को समझना तथा संयुक्त राष्ट्रो के अन्दर ब्रिटेन के अपेक्षाकृत अलग–थलग पड़े सरकारी दृष्टिकोण को जानना जिसमें युद्ध के दौरान भी भारत में जिम्मेदार राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की मांग को नामंजूर किया जा रहा था, काफी आवश्यक है।

1942 का क्रिप्स शिष्टमण्डल :

1942 का बसंत आते–आते एक अनुकूल स्थिति तैयार हो गई थी। अब ब्रिटेन की बारी थी कि वह पहल करे। यदि ब्रिटेन के सरकारी खेमों में अब भी थोड़ी–बहुत हिचकिचाहट थी और कुछ लोग इसका विरोध कर रहे थे तो मार्च में जापानियों के रंगून तक पहुँच जाने से इस बाधा को दूर करने की आवश्यक प्रेरणा मिल गई। 8 मार्च को रंगून का पतन हो गया । 11 मार्च को किप्स मिशन की घोषणा हो गई।

1942 के मार्च और अप्रैल महीनों में क्रिप्स मिशन की भारत यात्रा युद्ध के दौरान ब्रिटिश भारतीय संबंधों के संकट में एक संक्रांति बिन्दु साबित हुआ। क्रिप्स योजना या भारत के लिए संविधानिक प्रस्तावों को ब्रिटेन की युद्धकालीन मंत्रिमंडल ने तैयार किया था और इन प्रस्तावों को सर स्टैफोर्ड क्रिप्स भारत लेकर आए थे ताकि वे इसे समझौते का आधार बनाकर भारतीय नेताओं के साथ विचार विमर्श कर सकें। क्रिप्स योजना के दो प्रमुख भाग थे–

1. युद्ध के बाद का प्रस्ताव–

(क) एक नये भारतीय संघ के लिए डोमीनियन का दर्जा जिसे यह अधिकार प्राप्त हो कि यदि वह चाहे तो ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से खुद को अलग कर ले,

(ख) युद्ध के तत्काल बाद एक 'संविधान का निर्माण करने वाले निकाय' का गठन किया जाए जिसमें प्रांतीय विधानसभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित कुछ सदस्य हो जिन्हें युद्ध के पश्चात समानुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुना जाए तथा कुछ सदस्य ऐसे हो जिन्हें देशी रियासतों के राजा अपनी रियासत की आबादी के अनुपात में नामजद करें। ये लोग मिलकर देश का एक नया संविधान बनाएं।

(ग) ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रांत को या रियासत को अलग रहने का अधिकार हो और या तो वे वर्तमान आधार पर बने रहें या समान अधिकारों वाले एक पृथक डोमीनियन के रूप में एक नए संविधान की रचना करें।

(घ) ब्रिटेन तथा 'संविधान का निर्माण करनेवाले निकाय' के बीच एक संधि हो ताकि जातिगत और धार्मिक अल्पसंख्यकों की रक्षा के लिए ब्रिटेन की शाही सरकार द्वारा किए गए वादों के अनुरूप व्यवस्था की जा सके।

2. युद्ध के दौरान के तात्कालिक प्रस्ताव–

भारतीय प्रतिनिधियों के परामर्शक सहयोग के जरिए ब्रिटेन द्वारा अपने हाथ में सत्ता रखना।

लेकिन कांग्रेस युद्ध के दौरान ऐसी राष्ट्रीय सरकार चाहती थी जिसके पास काफी अधिकार हों और यह अंतिम मुद्दा ही वह नाजूक मुद्दा साबित हुआ जिसपर क्रिप्स वार्ता टूट गई।

यह देखा जा सकता है कि समाचार पत्रों द्वारा एक नए और युगांतकारी प्रस्ताव के रूप में बहुप्रचारित क्रिप्स योजना ने ब्रिटिश नीति में किसी बुनियादी तब्दीली का नमूना नहीं पेश किया। इसने 1940 में वायसराय द्वारा पेश किए गए 'अगस्त प्रस्ताव' की पुरानी चिरपरिचित बातों को ही दुहराया जिसे भारतीय जनमत के प्रत्येक वर्ग ने पहले ही ठुकरा दिया था। क्रिप्स मिशन के अर्ध–सरकारी इतिहास ने इस सच्चाई को स्वीकार किया :

घोषणा के मसौदे में सरकारी नीति में कोई जबर्दस्त परिवर्तन की बात नही थी.... सिद्धांत के रूप में, घोषणा का मसौदा वस्तुतः 'अगस्त प्रस्ताव ' से भी एक कदम आगे था।

उन्होंने लिखा :

घोषणा के मसौदे में युद्ध के दौरान संविधान के स्वरूप में किसी बड़े परिवर्तन की बात को निकाल दिया गया था।

बातचीत के दौरान कांग्रेस ने किसी मनमुताबिक समझौते की आशा में बेहद रियायतें देने की बात कही। कांग्रेस ने कहा कि यदि उन्हें सचमुच जिम्मेदारी और अधिकार दिए जाए, तो यह ब्रिटिश वायसराय के अधीन काम करने को तैयार है और वह एक ब्रिटिश कमांडर इन चीफ को भी स्वीकार करने को तैयार हैं जो उनकी सेनाओं का संचालन ही नहीं करेगी बल्कि उस मंत्रिमंडल का सदस्य भी होगा।

लेकिन इन सारी बातों का कोई नतीजा नहीं निकला। उनसे कहा गया कि ब्रिटेन का प्रभुत्व और ब्रिटेन की तानाशाही पूरी तरह बनी रहेगी, उनसे कहा गया कि भारत के रक्षामंत्री को अधिक से अधिक कैंटीन और स्टेशनरी की देखभाल का काम दिया जा सकता है। जब इन्होंने (कांग्रेस सदस्यों ने) अपनी असहमति के क्षेत्र को कम करने की कोशिश की तो उसे साफ शब्दों में कहा गया कि जो दिया जा रहा है उसे 'लेना हो तो लो नही तो जाओं।' 'लेना हो तो लो नही तो जाओं' की इस प्रवृति से पता चलता है कि, अंग्रेजो का इरादा समझौता करने का नहीं बल्कि भविष्य के संघर्ष के लिए आधार तैयार करने का था।

भारतीय जनमत के हर वर्ग के लोगों ने यहाँ तक कि अत्यन्त नरमदली विचारधारा के लोगों ने भी क्रिप्स योजना का जबरदस्त विरोध किया। कांग्रेस ने ही नहीं बल्कि सभी प्रमुख संगठनों ने क्रिप्स के प्रस्तावों को ठुकरा दिया। बातचीत भंग होने पर कलकत्ता के स्टेट्समैन ने लिखा :

जब तक प्रस्तावों का मसौदा ब्रिटेन का भारतीय विभाग (इंडिया ऑफिस) और भारत सरकार द्वारा तैयार होता रहेगा तब तक किसी भी दूत को सफलता नहीं मिल सकती और तब तक इस देश के लिए हर घंटे बढ़ते खतरे से निबटने का तरीका नहीं ढूँढ़ा जाएगा.....

सारा दोष इंडिया ऑफिस का और भारत सरकार के अधिकारी वर्ग का है।

अगस्त प्रस्ताव :

द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी की असाधारण सफलता तथा फ्रांस, हॉलैंड और बेल्जियम के पतन के पश्चात ब्रिटेन की स्थिती अत्यन्त नाजुक हो गई थी। उन परिस्थितियों में भारतीयों का सहयोग पाने के लिए ब्रिटेन ने समझौतावादी दृष्टिकोण की नीति अपनाई। 8 अगस्त 1940

को वायसराय लिनलिथगो ने भारतीयों के लिए एक घोषणा की जिसे 'अगस्त प्रस्ताव' के नाम से जाना जाता है।

इस प्रस्ताव के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित थे–

(1) भारत के लिये डोमिनियन स्टेट्स मुख्य लक्ष्य।

(2) भारतीयों को सम्मिलित कर युद्ध सलाहकार परिषद् की स्थापना।

(3) युद्ध के उपरांत संविधान सभा का गठन किया जाएगा, जिसमें मुख्यतया भारतीय ही अपनी सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक धारणाओं के अनुरूप संविधान की रूपरेखा सुनिश्चित करेंगे। संविधान ऐसा होगा कि रक्षा, अल्पसंख्यकों के हित, राज्यों से संधियाँ तथा अखिल भारतीय सेवाएँ आदि मुद्दों पर भारतीयों के अधिकार का पूर्ण ध्यान रखा जाएगा।

(4) अल्पसंख्यकों को आश्वस्त किया गया कि सरकार ऐसी किसी संस्था को शासन नहीं सौंपेगी, जिसके विरूद्ध सशक्त मत हो।

(5) वायसराय की कार्यकारिणी परिषद् का विस्तार किया जाएगा।

यह प्रस्ताव महत्वपूर्ण इसलिए था क्योंकि इसमें भारतीयों द्वारा स्वयं संविधान निर्माण करने के तर्क को मान्यता दी गई थी तथा कांग्रेस की संविधान सभा गठित करने की मांग को भी स्वीकार किया गया था। राष्ट्रवादी आंदोलन में यह मांग लंबे समय से की जा रही थी। पूर्व में 'नेहरू रिपोर्ट' के द्वारा भी कांग्रेस ने अपनी स्वयं संविधान निर्माण करने की क्षमताओं को साबित किया था। दूसरा, इस प्रस्ताव में डोमिनियन स्टेट्स के मुद्दे को भी स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया था।

फिर भी, कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। नेहरू ने कहा ''डोमिनियन स्टेट्स का मुद्दा पहले ही अप्रासांगिक हो चुका है।'' गांधी जी ने भी इस घोषणा की आलोचना करते हुए कहा कि इस प्रस्ताव से राष्ट्रवादियों तथा उपनिवेशी सरकार के बीच खाई और चौड़ी होगी। मुस्लिम लीग ने हालांकि प्रस्ताव में अल्पसंख्यकों के संबंध में दिये गए आश्वासनों का स्वागत किया परंतु प्रस्ताव में पाकिस्तान की मांग स्पष्ट रूप में स्वीकार न किये जाने के कारण लीग ने प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

इस प्रकार, ब्रिटिश सरकार द्वारा विवशता में लाया गया अगस्त प्रस्ताव कई महत्त्वपूर्ण प्रावधानों के बावजूद राष्ट्रवादियों की वास्तविक अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतर पाया और अस्वीकृत कर दिया गया।

गांधी जी ने अप्रैल 1942 में अंग्रजों के ''सुव्यवस्थित ढंग से भारत से चले जाने की बात कही। उनके अनुसार जो भी हो अब भारतीयों और अंग्रेजों की कुशलता इसी में थी कि अंग्रेज भारत से चले जाए। अब 'भारत छोड़ो' का नारा प्रसिद्ध हो गया। 10 मई, 1942 के 'हरिजन' में उन्होंने लिखा कि 'भारत में अंग्रेजों की उपस्थिती जापानियों को भारत पर आक्रमण करने का निमंत्रण है। उनके जाने से यह लोभ समाप्त हो जाएगा।'

इसी प्रकार 14 जुलाई 1942 को कांग्रेस कार्यकारिणी ने अंग्रेजों को चले जाने का प्रस्ताव पारित किया और स्पष्ट कहा कि ''यदि यह अपील स्वीकृत नहीं होती तो हम लोग महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश में एक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने के लिए बाध्य हो जाएंगे।''

8 अगस्त 1942 को बम्बई में हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में इस प्रस्ताव का समर्थन हुआ और यह कहा गया कि ''भारत में अंग्रेजी राज्य की समाप्ती भारत और संयुक्त राष्ट्रो दोनों के हित में है। इस राज्य का बने रहना भारत के लिए अपमानजनक है और उसे दिन–प्रतिदिन क्षीण कर रहा है और उसे अपनी रक्षा के असमर्थ बनाता जा रहा है और संसार की स्वतंत्रता में भी योगदान देने में बाधा है।''

फलवस्वरूप अगले दिन ही गांधी जी और कांग्रेस कार्यकारिणी के सभी सदस्य बन्दी बना लिए गए और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी तथा प्रांतीय कांग्रेस कमेटियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। परन्तु लोगों ने इसको चुपचाप स्वीकार नहीं किया। देश में विप्लव उठ खड़ा हुआ। स्थान–स्थान पर सार्वजनिक माल, संपति इत्यादि की हानि हुई। गोलियां चली। सरकार ने भी दमन चक्र चलाया, सैकड़ों व्यक्ति मारे गए और हजारों जेल में डाल दिए गए।

कांग्रेसी नेता इस प्रकार जेलों में बन्द थे तो दूसरी ओर जिन्ना ने मुस्लिम लीग को 23 मार्च, 1943 को पाकिस्तान दिवस मनाने का आह्वान किया और समस्त भारत के मुसलमानों को यह कहा कि पाकिस्तान ही मुसलमानों का राष्ट्रीय उद्देश्य है। लीग ने भी 26 अप्रैल, 1943 को इसका समर्थन कर दिया।

जून 1944 में जब विश्वयुद्ध समाप्ति की ओर था तो गांधी जी को जेल से रिहा कर दिया गया। जेल से निकलने के बाद उन्होंने कांग्रेस और लीग के बीच फासले को पाटने के लिए जिन्ना के साथ कई बार बात की। 1945 में ब्रिटेन में लेबर पार्टी की सरकार बनी। यह सरकार भारतीय स्वतंत्रता के पक्ष में थी। उसी समय वायसराय लॉर्ड वेवल ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों के बीच कई बैठकों का आयोजन किया।

जून, 1945 में कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा अन्य पार्टियों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन शिमला में आयोजित किया गया लेकिन जल्द ही इस सम्मेलन की कार्यवाही में गतिरोध पैदा हो गया। बुनियादी योजना के लिए कोई संयुक्त मोर्चा बनाने के स्थान पर कांग्रेस और मुस्लिम लीग के नेता एक दूसरे के खिलाफ कुप्रचार में लग गए। शिमला सम्मेलन असफल साबित हुआ। इस तरह युद्ध के समाप्त होने पर जब पूरी दूनिया के लोग आजादी और मुक्ति की दिशा में बढ़ रहें थे, भारत उसी प्रकार गुलाम बना रहा जैसा वह युद्ध से पहले था।

निष्कर्ष :

1 सितम्बर, 1939 को द्वितीय विश्वयुद्ध जब छिड़ा था, उस समय भारत पर अंग्रेजो का शासन था। 3 सितम्बर, 1939 को दिन में 11 बजे, ब्रिटेन ने जर्मनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। उसी दिन लॉर्ड लिनलिथगों ने, जो भारत की ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार के वायसराय थे, कांग्रेस पार्टी और मुस्लिम लीग के नेताओं तथा देश की जनता को बताया कि भारत भी जर्मनी के साथ युद्ध की स्थिति में है, उसे ब्रिटेन के हाथ मजबूत करने होंगे।

जवाहर लाल नेहरू और महात्मा गांधी ने भारत पर थोपी गई युद्ध की इस एकतरफा घोषणा का विरोध किया। उनका कहना था कि ब्रिटेन यदि भारतीय जनता का समर्थन चाहता है तो उसे पहले बताना होगा कि युद्ध खत्म होने के बाद भारत के प्रति उसके लक्ष्य और आदर्श क्या होंगे। ब्रिटिश सरकार प्रथम विश्वयुद्ध के समय भी स्वतंत्रता का प्रलोभन देकर भारत को युद्ध में घसीट चुकी थी। भारतीय नेता दुबारा उसके झांसे में नहीं आना चाहती थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध में भारत का योगदान दक्षिण एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के रूप में सकारात्मक परिणाम था। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पूर्वी बर्मा (अब म्यांमार) के साथ–साथ उत्तर पश्चिम में अफगानिस्तान में भी भारत के कार्यो की सराहना की गई । भारत कभी भी

द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण का हिस्सा नहीं था, लेकिन इसके योगदान का युद्ध के परिणाम पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा था, जो वर्तमान पीढ़ी को पता होना चाहिए और अपने देश पर गर्व करना चाहिए।

संदर्भ :

1. आज का भारत : रजनी पाम दत्त – पृ0सं0–554, 557, 558, 560
2. कांस्टीट्यूशनल हिस्ट्री आफ इंडिया – सर ए. बी.कीथ–पृ0सं0–472–73
3. 'दी क्रिप्स मिशन' : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1942, प्रो. आर. कूपलैंड–पृ०सं०–30
4. 'हरिजन' : 9 सितम्बर 1939
5. 'इंडिया : ए रिस्टेटमेंट' : 1945 पृ0 सं0 –206
6. आधुनिक भारत का इतिहास : बी. एल. ग्रोवर, अलका मेहता, यशपाल– पृ0 सं0 – 316, 409, 411, 412
7. भारत का स्वतंत्रता संग्राम– विपिन चंद्र पृ0 सं0 – 342, 350, 414
8. आधुनिक भारत – सुमित सरकार पृ0 सं0 –421, 423, 432, 436
9. भारतीय इतिहास, भाग–3 12वीं कक्षा NCERT– पृ0 सं0 –363, 364
10. विकिपीडिया